LEARN GEETA
तस्मात् योगी भवार्जुन

॥ श्रीहरिः ॥
वसुदेवसुतं देवं कंसचाणूरमर्दनम् |
देवकीपरमानन्दं कृष्णं वन्दे जगद्गुरुम् ||

॥ गीता पढ़ें, पढ़ायें, जीवन में लायें ॥

## || श्रीमद्भगवद्गीता विवेचन सारांश ||

**अध्याय 18: मोक्षसंन्यासयोग**

3/6 (श्लोक 16-28), शनिवार, 14 अक्टूबर 2023

**विवेचक: गीता विशारद डॉ. संजय जी मालपाणी**

यूट्यूब लिंक: https://youtu.be/GlVFC06LvKg

# ज्ञान,कर्म और कर्ता के त्रिविध भेद

परमपिता परमेश्वर की प्रार्थना, दीप प्रज्वलन एवं गुरु वन्दना के साथ अत्यन्त सकारात्मक वातावरण में मोक्षसंन्यासयोग नामक अध्याय के विवेचन का शुभारम्भ हुआ।
गीता जी के पठन-पाठन की हमारी यह नौका अब अपने गन्तव्य स्थान की ओर बढ़ रही है। श्री भगवान अपने श्रीमुख से जीवन का अत्यन्त गूढ़ रहस्य हम लोगों को अत्यन्त सरल शब्दों में समझा रहे हैं।

**18.16, 18.17**

**तत्रैवं(म्) सति कर्तारम्, आत्मानं(ङ्) केवलं(न्) तु यः।**
**पश्यत्यकृतबुद्धित्वान्, न स पश्यति दुर्मतिः॥18.16॥**
**यस्य नाहङ्कृतो भावो, बुद्धिर्यस्य न लिप्यते।**
**हत्वाऽपि स इमाँल्लोकान्, न हन्ति न निबध्यते॥18.17॥**

परन्तु ऐसे पाँच हेतुओं के होने पर भी जो उस (कर्मों के) विषय में केवल (शुद्ध) आत्मा को कर्ता देखता है, वह दुष्ट बुद्धिवाला ठीक नहीं देखता; (क्योंकि) उसकी बुद्धि शुद्ध नहीं है अर्थात् उसने विवेक को महत्व नहीं दिया है।
जिसका अहंकृत भाव (मैं कर्ता हूँ - ऐसा भाव) नहीं है (और) जिसकी बुद्धि लिप्त नहीं होती, वह (युद्ध में) इन सम्पूर्ण प्राणियों को मारकर भी न मारता है (और) न बँधता है।

विवेचन : श्रीभगवान कहते हैं कि जिस पुरुष के अन्तःकरण में कर्ता होने का भाव नहीं है, जिसकी बुद्धि सांसारिक वस्तुओं के कर्मों मे लिप्त नहीं होती। ऐसा व्यक्ति अन्याय करने वाले लोगों को मार कर भी वास्तव में न तो मारता है और न ही पाप का भागीदार बनता है। यह बात भगवान ने कुरुक्षेत्र के मैदान में अर्जुन के सोये हुए विवेक को जाग्रत करने के लिए कही थी। श्रीमद्भगवद्गीता विवेक को जगाती है।

अन्यायी, आतंकवादी व्यक्ति का साथ देने वाला भी अन्यायी और आतंकवादी होता है, अतः ऐसे लोगों को मारने से कोई पाप नहीं लगता है। भगवान कहते हैं कि मैं जानता हूँ कि पितामह भीष्म तुम्हारे दादाजी हैं, गुरु द्रोणाचार्य तुम्हारे गुरु हैं पर इन लोगों ने दुर्योधन का साथ दिया जिसने भरी सभा में द्रौपदी को अपमानित किया। इन लोगों ने अन्याय का विरोध नहीं किया,

इसलिये ऐसे लोगों को मारने में कोई पाप नहीं है, ऐसे लोगों को मारना चाहिए। ऐसे लोगों को मारते समय मन में कर्त्तव्य का भाव होना चाहिए क्योंकि तुम क्षत्रिय हो और क्षत्रिय का धर्म है अन्यायी, आतंकवादियों का दमन करना। इसमें कोई पाप नहीं है। भगवान कहते हैं कि मैं कर्ता हूँ इस भावना से तुम्हें इन्हें नहीं मारना है बल्कि कर्त्तव्य की भावना से इन्हें मारना है। यह लोग अपने कर्मों के कारण पहले ही मारे जा चुके हैं। तुम्हें तो मैं केवल निमित्त मात्र बना रहा हूँ। शत्रुता की भावना से, अपने मन में उनके लिए बैर रखकर उनको नहीं मारना है। तुम्हें उनको इसलिये मारना है क्योंकि वह आतंकवादी है और तुम क्षत्रिय हो। देश व देश के नागरिकों की रक्षा करना तुम्हारा कर्त्तव्य है। अगर इन लोगों का तुमने वध नहीं किया तो आगे यह लोग अन्य स्त्रियों का अपमान करेंगे। निर्दोष व्यक्तियों को प्रताड़ित करेंगे। इसलिये दुर्योधन जैसे लोगों को तो तुम्हें मारना ही होगा।

अगर तुम राजा बनने के लिए यह कर रहे हो तो गलत है, सांसारिक वस्तुओं में अपनी बुद्धि को तुम्हें लिप्त नहीं करना है। मैं कर रहा हूँ इस भाव को भी अपने मन में नहीं आने देना है। अपने आप को पहचानो। मैं शरीर नहीं हूँ, मैं आत्मा हूँ। शरीर से हम जो भी कार्य करते हैं, अगर उसमें दोष भी होता है तो भी अगर वह कर्त्तव्य भाव से किए गए हैं। बिना किसी आकाँक्षा के किए गए हैं। समस्त संसार के भले के लिए किए गए हैं। समाज का, देश का उससे कल्याण हो रहा हो तो ऐसे कामों में कोई दोष नहीं लगता है। तुम्हें कोई पाप नहीं लगेगा तुम इसकी बिल्कुल चिन्ता नहीं करो।

**18.18**

**ज्ञानं(ञ्) ज्ञेयं(म्) परिज्ञाता, त्रिविधा कर्मचोदना।**
**करणं(ङ्) कर्म कर्तेति, त्रिविधः(ख्) कर्मसङ्ग्रहः॥18.18॥**

ज्ञान, ज्ञेय (और) परिज्ञाता - इन तीनों से कर्मप्रेरणा होती है (तथा) करण, कर्म (और) कर्ता - इन तीनों से कर्मसंग्रह होता है।

विवेचन : श्री भगवान कहते हैं कि ज्ञाता, ज्ञान और ज्ञेय यह तीन प्रकार की कर्म-प्रेरणा है। कर्ता, करण और क्रिया यह तीन प्रकार का कर्म सङ्ग्रह है।

हर कर्म दो स्तर पर घटित होता है।
इसको एक उदाहरण के माध्यम से समझते हैं। अगर हम अपने पूरे परिवार को कहीं बाहर घुमाने ले जाना चाहते हैं तो यह विचार, यह भाव हमारे मन में घटित होता है। उसके बाद कहाँ जाना है, यह भी मन में घटित होता है उसके बाद कैसे जाना है, यातायात के किस साधन से जाना है? कब जाना है और क्या-क्या सामान लेकर जाना है ये सब बाते मन में घटित होती है। यह पहला स्तर हुआ, दूसरे स्तर पर प्रत्यक्ष रूप में यह सारी घटनाएँ घटती है अर्थात् वास्तव में जब भी हम कोई कार्य करते हैं तो उसके मूल में पहले कार्य करने का भाव उत्पन्न होता है, वह अन्दर घटता है। उसके बाद फिर बाहर घटता है और प्रकट रूप में दिखाई देता है।

अन्तर वर्तुल और बाह्य वर्तुल इन दो स्तरों पर कोई भी घटना घटती है।
उदाहरण के लिए जैसे प्यास लगती है तो ज्ञान हुआ कि प्यास लगी है ज्ञान अपने अन्दर यह चिन्तन करके पता करता है कि पानी से प्यास बुझेगी। यह घटना पहले भी घट चुकी है तो यह इसको पता है। पानी ज्ञेय हुआ क्योंकि यह पता चल गया कि प्यास पानी से बुझेगी। यह बात हमें पता चली पर मैं कौन हूँ? मैं शरीर तो नहीं हूँ, मैं आत्मा हूँ। हम आँखों से देखते हैं पर देखने वाला तो कोई और है, आँखें तो मात्र एक साधन है। जिसको यह ज्ञान हो रहा है जो शरीर के अन्दर बैठा हुआ है वही जानता है। उसने ही यह समझा कि यह करना है। यह सब अन्दर घटित हो रहा है, बाहर से देखने पर कुछ भी दिखाई नहीं पड़ रहा है। यह सब अन्तर वर्तुल में घट रहा है । ज्ञाता, ज्ञान और ज्ञेय यह तीनों चीज अन्दर की तरफ घट रही है। कर्ता, कर्म और क्रिया यह तीन चीज बाहर घट रही हैं। यह बाह्य वर्तुल में घट रही है। शरीर इस काम को कर रहा है पर इन्द्रियों के कारण कर रहा है। इन्द्रियाँ कर्ता के अधीन है जैसे कर्ता कह रहा है, वैसे ही इन्द्रियाँ कर रही हैं। वास्तव में कर्ता और क्रिया यह दो ही कर्म संग्रह करते हैं। कर्ता ही कर्म करवाता है, अगर इसका ज्ञान हो जाए तो कर्ता, अकर्ता बन जाता है। कोई भी कर्म करने वाला मेरा शरीर है मेरी आत्मा नहीं।

**आत्मा सर्वथा शुद्ध, निर्विकार और अकर्ता है।**

**तीन प्रकार की कर्म-प्रेरणा हैं-**
**1. ज्ञाता : जानने वाले का नाम ज्ञाता है।**
**2. ज्ञान : जिसके द्वारा जाना जाए वह ज्ञान है।**
**3. ज्ञेय : जानने में आने वाली वस्तु का नाम ज्ञेय है।**

**तीन प्रकार का ही कर्म संग्रह है।**
**1. कर्ता : कर्म करने वाले का नाम कर्ता है।**
**2. करण : जिन साधनों से कर्म किया जाय, उनका नाम करण है।**
**3. क्रिया : कर्म करने का नाम क्रिया है।**

**18.19**

**ज्ञानं(ङ्) कर्म च कर्ता च, त्रिधैव गुणभेदतः।**
**प्रोच्यते गुणसङ्ख्याने, यथावच्छृणु तान्यपि॥18.19॥**

गुणों का विवेचन करने वाले शास्त्र में गुणों के भेद से ज्ञान और कर्म तथा कर्ता तीन-तीन प्रकार से ही कहे जाते हैं, उनको भी (तुम) यथार्थ रूप से सुनो।

विवेचन : भगवान कहते हैं कि गुणों की सङ्ख्या करने वाले शास्त्र में ज्ञान, कर्म तथा कर्ता इन गुणों के भेद तीन प्रकार के कहे गए हैं। हमारा यह शरीर आठ चीजों से मिलकर बना है, कुल मिलाकर तेईस चीज़े हो जाती हैं पर मूल रूप से पञ्च महाभूतो से मिलकर बना है। ज्ञानेन्द्रिय पाँच हैं - नाक, कान, आँख, जिह्वा और त्वचा। स्पर्श से पता चलता है कि क्या होगा। आँखों से देखने से पता चलता है कि यह क्या है। कानों से सुनकर पता चलता है कि क्या आवाज है, जिह्वा से स्वाद का और नाक से सुगन्ध का पता चलता है। यह सब पाँच इन्द्रियाँ हैं। पर जब कर्म घटता है तो वह कर्मेन्द्रियों के माध्यम से घटता है। कर्मेन्द्रियाँ भी पाँच हैं। हाथ-पैर दो, दो हैं पर उनको हम एक-एक ही गिनते हैं। मुँह और उत्सर्जन की दो इन्द्रियाँ कुल मिलाकर पाँच। पाँच ज्ञानेन्द्रियाँ, पाँच कर्मेन्द्रियाँ कुल मिलाकर 10 इन्द्रियाँ हो गई। इसके अलावा मन, बुद्धि, अहङ्कार यह भी हमें प्रकृति से ही प्राप्त हुआ है।

शरीर की अलग-अलग इन्द्रियाँ हैं, ज्ञानेन्द्रियाँ हैं, नहीं दिखने वाले मन, बुद्धि और अहङ्कार हैं, यह सब हमें प्रकृति से प्राप्त हुआ है। प्रकृति जड़ है, यहाँ पर मन में यह प्रश्न उठ सकता है कि प्रकृति जड़ कैसे हो सकती है क्योंकि पेड़ तो उगता है, बड़ा होता है तो वह जड़ कैसे हो सकता है। पर जब तक पेड़ में पुरुष तत्व नहीं आता, जब तक शरीर में आत्मा नहीं आती, तब तक वह जड़ है। जैसे ही पेड़ में पुरुष तत्व आता है वह चलायमान हो जाता है। शरीर में आत्मा के आते ही वह चलने लगता है। जैसे ही आत्मा निकल जाती है, शरीर जड़ हो जाता है। इसीलिए प्रकृति को जड़ भी कहा गया है। प्रकृति तीन गुणों से बनी हुई, त्रिगुणात्मक है।

तीन प्रकार के गुण हैं - सात्त्विक, राजसी और तामसी। सोया हुआ है, अंधेरे में है, वह सब तामसी है। आधा जगा हुआ है लेकिन ज्ञान नहीं है तो वह राजसी है, उसके मन में निरन्तर द्वंद्व चलता रहता है। जिस क्षण उसके मन का द्वंद समाप्त हो जाता है वह निर्द्वंद्व हो जाता है। पूरी तरह से जागते ही उसके अन्दर सद्गुण प्रकट होने लगते हैं।
कर्ता भी तीन प्रकार के हैं, ज्ञान भी तीन प्रकार के हैं और कर्म भी तीन प्रकार के हैं।

**18.20**

**सर्वभूतेषु येनैकं(म्), भावमव्ययमीक्षते।**
**अविभक्तं(म्) विभक्तेषु, तज्ज्ञानं(म्) विद्धि सात्त्विकम्॥18.20॥**

जिस ज्ञान के द्वारा (साधक) सम्पूर्ण विभक्त प्राणियों में विभागरहित एक अविनाशी भाव (सत्ता) को देखता है, उस ज्ञान को (तुम) सात्त्विक समझो।

विवेचन : श्री भगवान कहते हैं कि जिस ज्ञान से मनुष्य पृथक्-पृथक् सब भूतों में एक अविनाशी परमात्म भाव को, विभाग रहित सम भाव से स्थित देखता हो उस ज्ञान को सात्विक ज्ञान कहते हैं।
समुद्र में लहरें उठती हैं पर वास्तव में वह समुद्र का ही भाग होती हैं। घट के अन्दर भी एक आकाश होता है और बाहर भी जिसे हम घटा काश और पूर्वा काश कहते हैं पर वास्तव में वह एक ही है। अन्दर और बाहर एक ही आकाश होता है समुद्र के लहरों में भी वही पानी होता है समुद्र की लहर जब गिरती है तो वापस पानी बन जाती है।

घट जब फूट जाता है तो अन्दर बाहर सामान हो जाता है। बाहर की हवा और अन्दर की हवा एक हो जाती है। जिसने इस बात को जान लिया कि सभी प्राणियों में सभी जीवो में एक ही परमात्मा तत्व स्थित है तो उसने सात्विक ज्ञान को प्राप्त कर लिया।

ज्ञानेश्वरी में ज्ञानेश्वर महाराज जी कहते हैं कि क्या सूर्य अन्धेरे को ढूँढ सकता है? वास्तव में अन्धेरा नाम की कोई वस्तु नहीं होती है। प्रकाश का ना होना ही अन्धकार है। जैसे ही प्रकाश अन्धकार में पहुँचता है, अन्धकार विलुप्त हो जाता है।

अपनी छाया का आलिङ्गन करना भी सम्भव नहीं होता है। जैसे आईने में हम अपना प्रतिबिम्ब देखते हैं पर हम उसे आलिङ्गन नहीं कर सकते। अगर कोई मूढ यह सोचता है कि हम आईने को तोड़कर दूसरी तरफ तो हम हैं ही, गले मिल लेते हैं तो जैसे ही आइना टूटा प्रतिबिम्ब भी विलुप्त हो जाता है। जब तक आईना है तभी तक प्रतिबिम्ब दिखाई देता है। आईने के टूटते ही वह विलुप्त हो जाता है। सूर्य और किरणें एक ही हैं, व्यक्ति और छाया भी एक ही है, इस प्रकार सात्विक व्यक्ति भी सब भूतों में एक ही परमात्मा तत्त्व को देखता है। जिसको यह ज्ञान हो जाता है वह प्रकाशित हो जाता है। ज्ञान प्रकाशक है। सद्बुद्धि के जाग्रत होने पर सम्पूर्ण शरीर में प्रकाश फैल जाता है, ज्ञान का प्रकाश। ऐसे ज्ञान को सात्विक ज्ञान कहते हैं।

**18.21**

**पृथक्त्वेन तु यज्ज्ञानं(न्), नानाभावान्पृथग्विधान्।**
**वेत्ति सर्वेषु भूतेषु, तज्ज्ञानं(म्) विद्धि राजसम्॥18.21॥**

परन्तु जो ज्ञान अर्थात् जिस ज्ञान के द्वारा मनुष्य सम्पूर्ण प्राणियों में अलग-अलग अनेक भावों को अलग-अलग रूप से जानता है, उस ज्ञान को (तुम) राजस समझो।

विवेचन : जिस ज्ञान के द्वारा मनुष्य सम्पूर्ण भूतों में भिन्न-भिन्न प्रकार के, नाना भावों को अलग-अलग जानता है, उस ज्ञान को राजस ज्ञान कहते हैं।
उदाहरण के लिए अगर कोई सोने से अलङ्कार बनवाता है और फिर सुनार से पूछता है कि सोना कहाँ है, सुनार के यह कहने पर कि यही सोना है तो वह उत्तर अगर यह दे कि यह तो अलङ्कार है सोना कहाँ है? मिट्टी से घड़ा बनाया जाता है तो मिट्टी दिखाई नहीं देती है तो कोई अगर यह पूछता है की मिट्टी कहाँ गई तो मिट्टी और घड़ा एक ही हैं, अलग-अलग नहीं हैं इस प्रकार प्राणी जगत में भिन्न-भिन्न प्रकार के प्राणियों के होने पर भी सबके अन्दर एक ही परमात्मा तत्व है, सब उसी का स्वरूप हैं। आत्मा परमात्मा का ही बीज है।

अगर हम एक मोमबत्ती से, दूसरी मोमबत्ती जलाकर कमरे में रखते हैं तो दोनों मोमबत्ती के प्रकाश को हम अलग-अलग नहीं देख सकते हैं। प्रकाश एक दूसरे में मिल जाता है, उसको हम अलग-अलग नहीं देख सकते। यह राजस ज्ञान कहलाता है।

**18.22**

**यत्तु कृत्स्नवदेकस्मिन्, कार्ये सक्तमहैतुकम्।**
**अतत्त्वार्थवदल्पं(ञ्) च, तत्तामसमुदाहृतम्॥18.22॥**

किंतु जो (ज्ञान) अर्थात् जिस ज्ञान के द्वारा मनुष्य एक कार्यरूप शरीर में ही सम्पूर्ण की तरह आसक्त रहता है तथा (जो) युक्तिरहित, वास्तविक ज्ञान से रहित (और) तुच्छ है, वह तामस कहा गया है।

विवेचन : श्री भगवान कहते हैं कि जो ज्ञान एक कार्यरूप शरीर में सम्पूर्ण के सदृश आसक्त है तथा जो बिना युक्ति वाला और सात्विक अर्थ से रहित और तुच्छ है, उसे तामस ज्ञान कहते हैं। उसके अन्दर कोई जिज्ञासा नहीं होती है। तामस व्यक्ति निद्रा में, अपने भोग विलास में व्यस्त होता है। भगवान ऐसे व्यक्ति को अज्ञानी नहीं कहते क्योंकि अज्ञान में भी ज्ञान शब्द आ जाता है। वह ऐसे व्यक्ति को तुच्छ कहते हैं। ऐसे व्यक्ति घोर तम में लिपटे हुए होते हैं, उन्हें किसी से कोई सरोकार नहीं होता है। ऐसे ज्ञान को, जो सोया हुआ है उसे तामस ज्ञान कहते हैं।
भगवान राजस कर्म और तामस कर्म के बारे में भी बताते हैं।

**18.23**

**नियतं(म्) सङ्गरहितम्, अरागद्वेषतः(ख्) कृतम्।**
**अफलप्रेप्सुना कर्म, यत्तत्सात्त्विकमुच्यते॥18.23॥**

जो कर्म शास्त्रविधि से नियत किया हुआ (और) कर्तृत्वाभिमान से रहित हो (तथा) फलेच्छारहित मनुष्य के द्वारा बिना राग-द्वेष के किया हुआ हो, वह सात्त्विक कहा जाता है।

विवेचन : श्री भगवान कहते हैं कि जो कर्म शास्त्रविधि के नियत किया गया हो और कर्ता के अभिमान से रहित हो तथा फल ना चाहने वाले पुरुष के द्वारा बिना राग -द्वेष के किया गया हो, ऐसे कर्म को सात्विक कर्म कहा जाता है।

नियतम् कर्म : अर्थात् जो शास्त्र में कहा गया है और दूसरा स्वभावगत कर्म, सहज कर्म है।

संग रहितम् : आसक्ति से मुक्त स्वार्थ रहित। आपका कर्म नियत होना चाहिए, स्वभाव के अनुकूल होना चाहिए, स्वार्थरहित होना चाहिए और अहङ्कार से रहित बिना राग - द्वेष  के होना चाहिए।

अफलप्रेप्सुना : अपेक्षा रहित, मनुष्य के द्वारा जो कर्म बिना फल की इच्छा से करे जाए। कर्म से फल की प्राप्ति की इच्छा करके कर्म नहीं करना चाहिए।

श्रीमद्भगवद्गीता में बार-बार कहा गया है कि फलाकाँक्षा को छोड़िए। फल  को प्राप्त करने की इच्छा को छोड़िए। इसका अर्थ यह नहीं है कि आपको फल प्राप्त करने की इच्छा को छोड़ना है, वह इच्छा होनी चाहिए पर कर्म करते समय इसको ध्यान में नहीं रखना है। उस समय अपने कर्म पर ध्यान केंद्रित करना है जब हम अपना कर्म पूरे मनोयोग से करते हैं तो हमें फल अवश्य प्राप्त होता है।

उदाहरण के लिए अगर हम आम का पेड़ लगाते हैं तो हमें आम का फल प्राप्त होगा पर अगर हम उसको बार-बार यह देखते हैं कि फल अभी तक नहीं आया  उसके  बीज को  देखते हैं और फिर मिट्टी में दबा देते हैं तो बार-बार बीज को निकालने से वह सड़ जाता है और पेड़ नहीं बन पाता और अगर हम यह सोचते हैं ठीक है जब फल को आना है तब वह आएगा अगर हम नहीं खा पाए तो हमारे आगे आने वाली पीढ़ियाँ  खायेगीं, तो फल अपने समय से अवश्य आता है और प्रतीक्षा करने से हमारी उम्र भी बढ़ जाती है।

आजकल काफी बच्चे आईआईटी में प्रवेश की इच्छा से पढ़ाई करते हैं और सफलता न मिलने पर डिप्रेशन में चले जाते हैं और कभी-कभी आत्महत्या तक कर लेते हैं।अगर वह अपना पूरा ध्यान इस बात पर लगाएं कि हमें अपने ज्ञान को बढ़ाना है। जब ज्ञान बढ़ेगा तो आईआईटी में प्रवेश भी आसानी से मिल जाएगा।

अपेक्षा रहित होकर ज्ञानार्जन या अन्य कोई भी काम करना चाहिए। अपेक्षा से तनाव बढ़ता है अपेक्षा शून्य होने से तनाव भी शून्य हो जाता है और तनाव शून्य होने से बेहतर परिणाम मिलते हैं। अर्जुन अत्यधिक तनाव में थे उनको तनाव रहित करना है इस समय भगवान का उद्देश्य था। अगर कोई भी व्यक्ति अत्यधिक तनाव में है तो तनाव से बाहर निकलने के लिए तो उसे भगवद्गीता पढ़नी और समझनी चाहिए।

फल की अपेक्षा से जब हम कोई भी काम करते हैं तो फल भी हमसे दूर चला जाता है। अपने उद्देश्य को ध्यान में रखकर हमें काम करने चाहिए। साधना में आनन्द लेना चाहिए। जब साधना में आनन्द लेते हैं तो हम अपने गन्तव्य तक अवश्य पहुँचते हैं। अतः साधना को बिना किसी अपेक्षा के करना चाहिए। अपेक्षा से अगर हम कोई काम करते हैं तो हमें केवल दु:ख प्राप्त होता है। अपेक्षा के बिना काम करने से आनन्द का भाव भी बढ़ता है। बी और डी के बीच में सी है। बी यानी बर्थ और डी यानी डेथ। बर्थ और डेथ के बीच में सी है, आपकी इच्छा की आपको उसे कैसे जीना है। निरपेक्ष भाव से आनन्द से जीना और अपेक्षा से दु:खी होकर जीना यह आपके ऊपर निर्भर करता है।

आनन्द का झरना सबके अन्दर प्रवाहित हो रहा है उसको बाहर भी निकालना चाहिए। सुख और आनन्द में अन्तर है। सुख में नींद नहीं आती है पर आनन्द में हमें अच्छी नींद आती है। इस भाव में रहने वाले सात्विक कर्म करते हैं। कर्म बदलने की आवश्यकता नहीं है, भाव बदलने की आवश्यकता है। जब हम निरपेक्ष भाव से कर्म करते हैं तो आनन्द की प्राप्ति होती है और यही सात्विक कर्म होता है और फल अवश्य प्राप्त होता है, पर फल की इच्छा से कर्म नहीं करने चाहिए।

**18.24**

**यत्तु कामेप्सुना कर्म, साहङ्कारेण वा पुनः।**
**क्रियते बहुलायासं (न्), तद्राजसमुदाहृतम्॥18.24॥**

परन्तु जो कर्म भोगों की इच्छा से अथवा अहंकार से और परिश्रमपूर्वक किया जाता है, वह राजस कहा गया है।

विवेचन : श्री भगवान कहते हैं कि जो कर्म अत्यन्त परिश्रम से युक्त होता है, भोगों को चाहने वाले पुरुष द्वारा या अहङ्कार से युक्त पुरुष द्वारा किया जाता है ऐसे कर्म राजस कर्म होते हैं। कुछ लोग भागवत् कथा का आयोजन अत्यन्त अहङ्कार के साथ करते हैं। मन में इस भाव के साथ कि मैं यजमान हूँ, मैंने यह किया है, ऐसे लोगों को इससे कुछ भी प्राप्त नहीं होता है। अहङ्कार के भाव से किया गया कोई भी काम फलीभूत नहीं होता है। अगर हम कोई काम कर रहे हैं तो, हम तो निमित्त मात्र हैं। ईश्वर ने हमको इसके लिए चुना है हमें उनका आभार व्यक्त करना चाहिए। आपके मन के भाव पर यह निर्भर करता है कि आप किस तरह का कर्म कर रहे हैं।

जैसे एक दाना पाने के लिए चूहा पहाड़ को कुतर देता है वैसे ही राजस प्रवृत्ति वाले लोग अपनी झूठी प्रतिष्ठा के लिए पूरा पहाड़ उठा लेते हैं।

**18.25**

**अनुबन्धं(ङ्) क्षयं(म्) हिंसाम्, अनवेक्ष्य च पौरुषम्।**
**मोहादारभ्यते कर्म, यत्तत्तामसमुच्यते॥18.25॥**

जो कर्म परिणाम, हानि, हिंसा और सामर्थ्य को न देखकर मोहपूर्वक आरम्भ किया जाता है, वह तामस कहा जाता है।

विवेचन : श्री भगवान कहते हैं कि जो कर्म परिणाम, हानि, अहिंसा का विचार न कर, केवल अज्ञान से आरम्भ किया जाता है, वह कर्म तामस कर्म कहलाता है।
ज्ञानेश्वर महाराज जी कहते हैं कि जैसे पानी पर लकीर खींचने वाला कर्म है जिसका कोई मतलब नहीं है तामस प्रवृत्ति के लोग ऐसे ही कर्म करते हैं। लोग कांजी को मथ कर मक्खन निकालने का प्रयास करते हैं, पर कांजी को मथने से मक्खन नहीं निकलता है। राख को फूँक-फूँक कर भी सोना ढूँढने का प्रयास करते हैं। राख का पूरा पहाड़ फूक देने पर भी सोना नहीं प्राप्त होता है। ऐसे व्यक्ति अज्ञानमय होते हैं। रेत को रगड़ने से तेल नहीं प्राप्त होता है। चार दाने प्राप्त करने के लिए भूसे को फटक रहा है। आकाश में बाण चला रहा है। हवा को पकड़ने के लिए फाँस फेंक रहा है। इस प्रकार के निरर्थक कर्म करने में लोग अपना पूरा जीवन लगा देते हैं।
हे प्रभु ऐसी कृपा करो कि हमारा जीवन निरर्थक जाने ना पाए। हमारा जीवन सात्विक कर्मों से भर जाए।

**हे नाथ अब तो ऐसी दया हो कि जीवन निरर्थक जाने ना पाए।**
**यह मन ना जाने क्या क्या कराए कुछ बन ना पाया अपने बनाए।।**
**हे प्रभु मेरे हाथ से सात्विक कर्म हो और मैं सात्विक कर्ता बनूं।**

**18.26**

**मुक्तसङ्गोऽनहंवादी, धृत्युत्साहसमन्वितः।**
**सिद्ध्यसिद्ध्योर्निर्विकारः(ख्), कर्ता सात्त्विक उच्यते॥18.26॥**

(जो) कर्ता राग रहित, कर्तृत्वाभिमान से रहित, धैर्य और उत्साहयुक्त (तथा) सिद्धि और असिद्धि में निर्विकार है, (वह) सात्त्विक कहा जाता है।

विवेचन : श्री भगवान कहते हैं कि जो कर्ता सङ्ग रहित है अहङ्कार के वचन ना बोलने वाला हो, अपेक्षा से रहित धैर्यवान, उत्साहवान, अपने काम को सिद्ध करने के लिए तत्पर है, उसे कार्य सिद्ध होने पर भी कोई हर्ष नहीं एवं कार्य नहीं हो पाया तो भी कोई दु:ख नहीं। ऐसा कर्ता सात्विक कर्ता कहलाता है।

बुद्धि को स्थिर रखने के लिए चित्त का प्रसन्न होना अत्यन्त आवश्यक है। कितनी भी विषम परिस्थिति क्यों ना आ जाए अगर चित्त में प्रसन्नता है तो वह काम आनन्दपूर्वक अवश्य सम्भव होता है। हमें प्रसन्नता की आदत डालनी चाहिए। चेहरे पर हमेशा मुस्कुराहट होनी चाहिए।कोई कुछ भी कहे मैं शान्ति के साथ उसकी बात को सुनता हूँ। हँसते - मुस्कुराते हुए लोग सबको अच्छे लगते हैं। रोता हुआ व्यक्ति किसी को अच्छा नहीं लगता है। भगवान को भी हँसते हुए, मुस्कुराते हुए लोग ज्यादा प्रिय होते हैं। हर परिस्थिति में निर्विकार रहने वाले लोग सात्विक कर्ता होते हैं।

**18.27**

**रागी कर्मफलप्रेप्सु:(र्), लुब्धो हिंसात्मकोऽशुचिः।**
**हर्षशोकान्वितः(ख्) कर्ता, राजसः(फ्) परिकीर्तितः॥18.27॥**

जो कर्ता रागी, कर्मफल की इच्छावाला, लोभी, हिंसा के स्वभाव वाला, अशुद्ध (और) हर्ष-शोक से युक्त है, (वह) राजस कहा गया है।

विवेचन : श्री भगवान कहते हैं कि जो कर्ता आसक्ति  से युक्त है, फलों को चाहने वाला है, लोभी है और दूसरों को कष्ट देनेवाले स्वभाव का है , हर्ष और शौक से लिप्त है। जो समत्व के भाव में नहीं है ऐसा कर्ता राजसी कर्ता कहलाता है। आकाँक्षाएं अगर आगे चलती है तो उनके पीछे-पीछे शोक अवश्य चलता है। सुख और दु:ख एक सिक्के के दो पहलू होते हैं। पैसा कमाना कोई बुरी बात नहीं है पर पैसा कमाने की होड़ में इतना नहीं लिप्त हो जाना चाहिए कि हम अपने परिवार पर ध्यान ना दे पाएँ। अपने बच्चों को संस्कार नहीं दे पाए क्योंकि एक दिन जब हम बहुत पैसा तो कमा लेंगे, यह सोचकर कि हमें इससे सुख मिलेगा पर अगर परिवार पर ध्यान नहीं दिया है बच्चों को संस्कार नहीं दिए हैं तो वह बच्चे उस पैसे को एक क्षण में ही नष्ट कर सकते हैं। हम यह सोचते हैं कि पैसा आएगा तो सुख आएगा पर यह नहीं समझ पाते है कि सुख के पीछे-पीछे दु:ख भी आएगा। सुख का अंत दु:ख में अवश्य  होता है पर आनन्द का अन्त परमानन्द होता है।
उपरोक्त गुणों से युक्त कर्ता राजस कर्ता कहलाते हैं।

**18.28**

**अयुक्तः(फ्) प्राकृतः(स्) स्तब्धः(श्), शठो नैष्कृतिकोऽलसः।**
**विषादी दीर्घसूत्री च, कर्ता तामस उच्यते॥18.28॥**

(जो) कर्ता असावधान, अशिक्षित, ऐंठ-अकड़वाला, जिद्दी, उपकारी का अपकार करनेवाला, आलसी, विषादी और दीर्घसूत्री है,

(वह) तामस कहा जाता है।

विवेचन : श्री भगवान कहते हैं कि अयुक्त अर्थात जो युक्त नहीं है वह किसी काम का नहीं है, असावधान है, गंवार है, अशिक्षित है, अकड़ वाला है, जिद्दी है, आलसी है और जो उसके ऊपर उपकार करता है उसका भी वह अपकार करता है। दिन भर ऐसे व्यक्ति रोते रहते हैं, हर काम को आगे कल पर डालते रहते हैं। उपरोक्त बातों में से अगर एक भी गुण किसी में होता है तो ऐसा कर्ता तामस कर्ता कहलाता है।

यहाँ तामस कर्ता के बारे में एक कहानी के माध्यम से समझाया हैं। एक साधु नाम का व्यक्ति था वह दीर्घसूत्री (जो किसी कार्य का आरम्भ करके बहुत काल तक उसे पूरा नहीं करता) था, दूसरों पर अवलम्बित रहता था, विशेष कर अपनी पत्नी पर। एक दिन उसके सिर में दर्द हो रहा था उसने अपनी पत्नी से पूछा मैं क्या करूँ। पत्नी ने कहा डॉक्टर को दिखा दो। उसने पत्नी से फिर पूछा गाँव के डॉक्टर को दिखाऊँ या शहर  के। उसकी पत्नी ने कहा शहर के डॉक्टर को दिखा दो। वह व्यक्ति शहर के डॉक्टर के पास गया डॉक्टर ने उसका परीक्षण करने के बाद कहा कोई विशेष बात नहीं है आपको एसिडिटी हो गई है यह दो गोली मैं दे रहा हूँ, इसको खाने के समय खा लीजिएगा।

उस व्यक्ति ने पूछा डॉक्टर साहब खाने के समय से क्या मतलब है खाने के पहले खाना है या बाद में।
डॉक्टर ने कहा यह गोली खाना खाने के पहले खाना और यह दूसरी गोली खाना खाने के बाद में खाना।
उसने फिर पूछा ठीक से बताइए डॉक्टर साहब मुझे यह गोली चबाकर खानी है या निगलनी है।
डॉक्टर ने कहा आपको यह गोली निगलनी है यह बहुत कड़वी है आप चबाकर नहीं खा सकते।
अच्छा यह निगलनी है तो किस चीज से निगलनी है ठीक से बताइए,
डॉक्टर ने कहा - दूध से ले लेना।
अच्छा डॉक्टर साहब दूध कितना होना चाहिए एक कटोरी, एक गिलास या लोटा भर।
डॉक्टर ने कहा - लोटा भर नहीं पीना, नहीं तो तुम्हें अपच हो जाएगा, कटोरी भर काफी है।
दूध ठंडा होना चाहिए या गरम।
डॉक्टर ने कहा -गुनगुना पी लेना।
डॉक्टर साहब जल्दबाजी मत करिए मुझे ठीक से समझाइए दूध गाय का होना चाहिए या भैंस का।
डॉ परेशान हो गया था उसने कहा बकरी का दूध भी चलेगा अब जाओ यहाँ से।
डॉक्टर साहब एक बात और बताइए खड़े-खड़े पीना है या बैठकर पीना है।
डॉक्टर ने कहा बैठ कर पीना है पर अब खड़े हो यहाँ से बाहर जाओ और मेरी फीस दो।
डॉक्टर साहब जल्दबाजी मत करिए। यह बताइए मुझे अपने हाथ से पीना है या पत्नी के हाथ से पीना है।
डॉक्टर ने कहा - मेरी फीस ₹100 दो और जाओ यहाँ से।
डॉक्टर साहब फीस बन्द दूँ या छुट्टे दूँ?
डॉक्टर साहब अब तक बहुत परेशान हो चुके थे, उन्होंने अपनी दराज खोलकर उसमें से 50- 50 के दो नोट निकले और उसको देते हुए कहा यह लो और जाओ यहाँ से।
वह बेचारा बहुत परेशान हो गया था। उसकी समझ में कुछ नहीं आ रहा था। वह बाहर आया और दोनों नोटों को ध्यान से देखता रहा फिर अन्दर डॉक्टर के पास गया और डॉक्टर से पूछा डॉक्टर साहब आपने हमें रुपए क्यों दिए ?
डॉक्टर ने कहा ₹50 से दवाई खरीद लेना और दूसरे ₹50 रिक्शा वाले को दे देना अब तुम जाओ यहाँ से।
डॉक्टर साहब गुस्सा मत होइएगा, एक अन्तिम प्रश्न का उत्तर दे दीजिए कौन से ₹50 से हमें दवाई खरीदनी है और कौन से ₹50 हमें रिक्शे वाले को देने हैं यह भी बता दीजिए ।

इस प्रकार के कर्ता तामस कर्ता कहलाते हैं। यह बात भगवान ने अर्जुन को समझायी।
इसी के साथ विवेचन सत्र का समापन हुआ और प्रश्नोत्तर सत्र आरम्भ हुआ।

**विचार मंथन (प्रश्नोत्तर):-**
**प्रश्नकर्ता :** कमलेश दीदी
**प्रश्न :** हमें दान किसको देना चाहिए ?

**उत्तर :** भगवान ने भी कहा है कि सुपात्र को दान देना चाहिए, कुपात्र को नहीं, देश के कल्याण के लिए जो लोग काम कर रहे हो उनको भी दान देना चाहिए, दान काल सुसंगत होना चाहिए। हमारे देश को अगर बचाना है, हिंदुस्तान को हिंदुस्तान बनाए रखना है तो हमारे देश में जो वेदों का स्वर गूंजता है जिससे भगवान में लोगों की श्रद्धा बनी रहती है और लोग धर्म कार्य से जुड़े रहते हैं। वेद बचेंगे, वेद शास्त्र बचेंगे तो हमारा देश बचेगा।
सुपात्र को ढूँढने में ऐसा ना हो कि हमारे हाथों की दान करने की आदत छूट जाए। अतः हमें थोड़ा बहुत दान करते रहना चाहिए जिससे हमारी यह आदत ना छूटे।

**प्रश्नकर्ता :** एस के त्रिपाठी भईया
**प्रश्न :** अकर्ता की पुनः व्याख्यां कर दीजिए।
**उत्तर :** कर्तापन का भाव आना कर्ता है। जो काम आप कर रहे हैं वह आप नही कर रहे हैं वह काम आपका शरीर कर रहा है। आप तो आत्मा है और यह काम जो हो रहा है वह शरीर के द्वारा हो रहा है यह भाव मन में जागना चाहिए। जब यह भाव मन में जागृत होगा तब आप यह कहेंगे कि यह काम मैंने नहीं किया मुझसे करवाया गया। इस भाव के साथ जब काम किया जाता है तब वह अकर्म बनता है और जो उस काम को करता है वह अकर्ता बन जाता है। काम वही रहता है पर मन का भाव बदलने से कर्ता अकर्ता बन जाता है।

**प्रश्नकर्ता :** सुशीला दीदी
**प्रश्न :** हवन करते समय हर मंत्र के बाद स्वाहा बोलते हैं तो स्वाहा का अर्थ क्या है ?
**उत्तर :** स्वाहा का अर्थ है कि यह मेरा नहीं तेरा है। अग्नि को हम समर्पित करते हैं, मन में इस भाव के साथ कि यह मेरा नहीं है यही स्वाहा का अर्थ है।

**प्रश्नकर्ता :** मंजू दीदी
**प्रश्न :** हम लोग यह सुनते हैं कि माँ सबसे ज्यादा नि:स्वार्थ सेवा करने वाली होती है। चार पीढ़ियों से मैं यह देख रही हूँ कि माँ के मन में यह आशा होती है कि मेरा एक पुत्र अवश्य हो जो मेरी उम्र हो जाने पर मेरी सेवा करें क्योंकि पुत्री शादी के बाद अपनी ससुराल चली जाती है। माँ के मन से इस अपेक्षा को कैसे निकाल सकते हैं ?

**उत्तर :** दु:ख का अंतिम परिणाम दु:ख ही है जिन लोगों ने इस भाव से पुत्र को पैदा किया वह अपने आसपास देख ले कि जरूरत पड़ने पर वह अपने पुत्र से ज्यादा जुड़े हुए हैं या अपनी पुत्री से। आपके प्रारब्ध में जो होगा वह आपको मिलेगा पुत्र या पुत्री। अपने आसपास देखिए पुत्र के होने पर भी वृद्धावस्था में लोग अकेले रह रहे हैं और पुत्र बाहर है उनके पास नहीं है। हमें अपने बुढ़ापे की व्यवस्था स्वयं करनी चाहिए पुत्र या पुत्री पर निर्भर होने का निश्चय नहीं करना चाहिए। पुत्र या पुत्री दोनों को समभाव से देखना चाहिए।

भगवान हम सबसे सिर्फ प्रेम करते हैं इसलिए हमारे सङ्ग अगर कुछ गलत हो रहा है तो उसके लिए भगवान को दोष देना सही नहीं है इसको एक कहानी के माध्यम से समझते हैं।
एक यमदूत पृथ्वी पर आया। किसी के प्राण लेने, वह प्राण लेकर उसको वापस यमलोक जाना था। यमदूत जिसके प्राण लेने आया था वह एक माता का शरीर था और उसके शरीर से तीन छोटे-छोटे बच्चे चिपके हुए बिलख बिलख कर रो रहे थे। यह दृश्य देखकर यमदूत का हृदय द्रवित हो गया। उसने उसे महिला के प्राण तो लिए और वापस यमलोक पहुँचकर भगवान से कहा कि आप कितना अन्याय करते हैं आपको पता है इसके तीन छोटे-छोटे बच्चे हैं वह अनाथ हो गए अब मैं यह काम नहीं करूंगा आप मेरा त्यागपत्र ले लीजिए क्योंकि मुझे पता है कि वह बच्चे भी भूख प्यास से व्याकुल होकर अपने प्राण त्याग देंगे और फिर आप मुझे ही उनके प्राण लेने के लिए भी भेजेंगे यह काम मुझसे नहीं हो पाएगा भगवान ने कहा त्यागपत्र जैसा यहाँ पर कुछ नहीं है। तुम्हें यह काम नहीं करना है, कोई बात नहीं पर, तुम्हें इसके लिए एक दंड भुगतना होगा। तुम्हें पृथ्वी पर जाकर रहना होगा और जब तुम तीन बार हँसोगे तभी तुम वापस आ पाओगे। यमदूत ने कहा पर मैं तो यही रहना चाहता हूँ पर तब तक वह धड़ाम से पृथ्वी पर आ चुका था। सर्दी के दिन थे उसके शरीर पर एक भी वस्त्र नही था। वह ठंड से काँपने लगा तभी वहाँ पर एक आदमी आया उसने उसे ठिठुरते हुये देखा तो अपना ऊनी कोट उसको पहना दिया। यमदूत ने कहा मुझे बहुत भूख लगी है क्या तुम मुझे कुछ खिला भी सकते हो वह आदमी उसके लिए कुछ भोजन ले आया। भोजन करने के बाद यमदूत ने कहा तुमने मुझे वस्त्र दिया भोजन कराया अब मुझे रहने के लिए छत भी प्रदान करो। उस आदमी ने कहा तुम मेरे

घर पर क्या करोगे देवदूत बोला जो काम तुम करते हो मैं तुम्हारा उसमें हाथ बटाऊँगा। वह आदमी जो चमार था उसने कहा ठीक है चलो मेरे घर तुम वहीं पर रह लेना। जब वह व्यक्ति यमदूत को लेकर अपने घर पहुँचा तो उसकी पत्नी उसके ऊपर बहुत क्रोधित हुई कि यहाँ पर दो लोगों का खाना तो पूरा नहीं हो पाता और तुम एक को और ले आए कैसे काम चलेगा। यह सुनकर यमदूत जोर से हँसने लगा। उस व्यक्ति ने कहा मेरी पत्नी मुझ पर गुस्सा हो रही है और तुम हँस रहे हो क्या बात है ? यमदूत ने कहा अभी नहीं बता सकता जब तीन बार हँस लूंगा तब बता दूँगा कि मैं क्यों हँस रहा हूँ।

यमदूत भी चमार के साथ चप्पल जूते बनाने लगा। उसके बनाए गए जूते चप्पल अद्भुत थे वह इतने अच्छे थे कि वह एक ब्रांड बन गए। उसके बनाए गए जूते चप्पल सबसे महंगे बिकने लगे। धीरे-धीरे चमार का बहुत बड़ा घर बन गया।

एक दिन राजा वहाँ पर आया उसने कुछ चमड़ा चमार को देते हुए कहा कि यह बहुत कीमती चमड़ा है मेरी बहुत इच्छा थी कि मैं इस चमड़े का जूता पहनूं तो मेरे लिए जूता बना देना चप्पल नहीं बनाना, जूता बनाना। चमार ने वह चमड़ा देवदूत को दे दिया और उसको निर्देश दिया कि महाराज के लिए जूता बनाना है चप्पल नहीं बनानी है। पर देवदूत ने राजा के लिए चप्पल बना दी। चमार ने जब यह देखा तो वह बहुत नाराज हुआ कि अब राजा उसको नहीं छोड़ेंगे। राजा उसको दण्ड देंगे। उसने कहा यह तुमने क्या किया तुमसे मैंने जूता बनाने के लिए कहा था तुमने चप्पल क्यों बना दी ? तभी राजमहल से एक आदमी दौड़ता हुआ आया और उसने कहा राजा का देहान्त हो गया है। तुमने उसे चमड़े का जूता तो नहीं बनाया उसकी चप्पल अब बना दो क्योंकि वहाँ पर परम्परा के अनुसार  मरने के उपरान्त चप्पल पहना कर अन्तिम  संस्कार किया जाता था। चमार ने उस व्यक्ति को चप्पल दे दी और कहा चप्पल ही बनी है यह ले जाओ और उसको विदा किया।

कुछ दिनों के पश्चात राजमहल से रानी ने बुलाया कि मेरे बच्चों की शादी है आकर नाप ले लो इनके जूते बनने हैं। चमार अपने बूढ़े कारीगर यानी देवदूत को अपने साथ लेकर राज महल गया राजकुमारों के पैरों की नाप लेने के लिए। रानी ने कहा मेरी तीनों पुत्र वधुओं के पैरों की भी नाप ले लो उनके भी जूते बना दो। जब देवदूत उन तीनों राजकुमारी के पैरों की नाप लेने लगा तो उसने देखा कि तीनों के पैर बिल्कुल एक जैसे थे उसने ऊपर देखा तो उसने देखा तीनों बिल्कुल एक जैसी थी। देवदूत ने पूछा तुम लोग कौन हो? तब तीनों राजकुमारियों ने कहा हमने अपने माता पिता को नहीं देखा है लोग कहते हैं कि जब हम लोग बहुत छोटे थे तभी हमारी माता का देहांत हो गया था। हमारे पड़ोस में रहने वाली एक साहूकारनी ने हमारा पालन पोषण किया और इस लायक बनाया कि आज हम राजवधू बन पाए। यह सुनकर वह बूढ़ा व्यक्ति जो की यमदूत था, अपने आप पर हँस दिया अपने मन में वह बोला यही तो प्रारब्ध है। उस माँ के प्राण हरने पर मैं अत्यन्त विचलित हो गया था पर अगर वह जीवित होती तो यह कन्याएं आज राजवधू नहीं बन पाती। माँ के चले जाने के कारण ही इन बच्चियों की हालत सुधर गई।

हमें पता नहीं होता है कि यह घटना क्यों घट रही है उसके पीछे कोई ना कोई कारण अवश्य होता है जिसको हम नहीं जानते हैं। उन्हीं चीजों पर हम भगवान को दोष देने लगते हैं रोने लगते हैं दुःखी होते हैं। यमदूत ने चमार के आगे हाथ जोड़कर कहा कि आज मैं तीसरी बार हँस दिया हूँ  आज मुझे अपनी ग़लती का भान हो गया है, अब मैं वापस जा रहा हूँ। इन बच्चियों की माँ के प्राण मैंने ही लिए थे। उस दिन मैं बहुत दुःखी हुआ था, बहुत रोया था, अपने काम को बुरा भला भी कहा था, पर आज मुझे अपनी ग़लती का भान हो गया है। यह कहकर वह यमदूत अंतर्ध्यान हो गया। इसी को प्रारब्ध कहते हैं।

प्रार्थना और हनुमान चालीसा के पाठ के साथ अलौकिक ऊर्जा से सत्र सम्पन्न हुआ।

**।।ॐ श्रीकृष्णार्पणमस्तु।।**

हमें विश्वास है कि आपको विवेचन की रचना पढ़कर अच्छा लगा होगा। कृपया नीचे दिए लिंक का उपयोग करके हमें अपनी प्रतिक्रिया दीजिए।

**https://vivechan.learngeeta.com/feedback/**

**विवेचन-सार आपने पढ़ा, धन्यवाद!**
हम सब गीता सेवी, अनन्य भाव से प्रयास करते हैं कि विवेचन के अंश आप तक शुद्ध वर्तनी में पहुंचे। इसके बाद भी वर्तनी या भाषा संबंधी किन्हीं त्रुटियों के लिए हम क्षमा प्रार्थी हैं।

---

**जय श्री कृष्ण !**
संकलन: गीता परिवार - रचनात्मक लेखन विभाग

---

**हर घर गीता, हर कर गीता!**
आइये हम सब गीता परिवार के इस ध्येय से जुड़ जायें, और अपने इष्ट-मित्र -परिचितों को गीता कक्षा का उपहार दें।

**https://gift.learngeeta.com/**

---

गीता परिवार ने एक नवीन पहल की है। अब आप पूर्व में सञ्चालित हुए सभी विवेचनों कि यूट्यूब विडियो एवं पीडीऍफ़ को देख एवं पढ़ सकते हैं। कृपया नीचे दी गयी लिंक का उपयोग करे।

**https://vivechan.learngeeta.com/**

---

**|| गीता पढ़े, पढ़ायें, जीवन में लाये ||**
**||ॐ श्रीकृष्णार्पणमस्तु ||**